विषय	हिंदी
प्रश्नपत्र सं. एवं शीर्षक	**P2: मध्यकालीन कविता - 1**
इकाई सं. एवं शीर्षक	**M33: बिहारी की काव्यकला**
इकाई टैग	**HND_P2_M33**

निर्माता समूह	
प्रमुख अन्वेषक	**प्रो. गिरीश्वर मिश्र** कुलपति, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : misragirishwar@gmail.com
प्रश्नपत्र समन्वयक	**प्रो. कृष्ण कुमार सिंह** अधिष्ठाता, साहित्य विद्यापीठ महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : kks5260@gmail.com
इकाई लेखक	**डॉ. जैनेन्द्र कुमार पाण्डेय** सहायक प्रोफेसर श्री मुरली मनोहर टाउन डिग्री कॉलेज, बलिया (उ.प्र.) ईमेल : jainendratdc@gmail.com
इकाई समीक्षक	**प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित** प्रोफेसर (सेवानिवृत्त), हिंदी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र) ईमेल : suryadixit123@gmail.com
भाषा संपादक	**प्रो. गिरीश्वर मिश्र** कुलपति, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : misragirishwar@gmail.com

पाठ का प्रारूप

1. पाठ का उद्देश्य
2. प्रस्तावना
3. रीतिकालीन परिवेश और काव्यकला
4. बिहारी की कला दृष्टि
5. बिहारी की काव्यकला
6. निष्कर्ष

1. पाठ का उद्देश्य :

इस पाठ के अध्ययन के उपरांत आप-

- रीतिकाल में कला के प्रति कवियों के लगाव का कारण समझ सकेंगे।
- रीतिकाल के कवियों, विशेषकर बिहारी पर दरबारी परिवेश के प्रभाव को समझ सकेंगे।
- बिहारी की कला-दृष्टि का विश्लेषण का सकेंगे और
- बिहारी की काव्यकला के विविध पक्षों को समझ सकेंगे।

2. प्रस्तावना:

रीतिकाल में कला के प्रति विशेष आग्रह दिखाई देता है। दूसरे शब्दों में, इस काल के कवि कला को लेकर अतिरिक्त सावधान दिखाई देते हैं। कविकर्म के लिए संस्कृत, प्राकृत एवं अपभ्रंश के तमाम ग्रंथों का अध्ययन और काव्यशास्त्र की गहरी जानकारी कवियों का अभीष्ट बन जाता है। कवियों का पूरा ध्यान रस, छंद, अलंकार, नायिकाभेद के शास्त्रीय ग्रंथों पर केन्द्रित हो जाता है। ऐसा मान लिया जाता है कि काव्यकला की समुचित जानकारी के अभाव में कविता करना संभव नहीं है। स्वाभाविक रूप से इस समय कविता का रूप पक्ष महत्वपूर्ण हो उठता है और भावपक्ष गौण। कविता भावों की सहज अभिव्यक्ति न होकर अलंकरण की चीज बन जाती है। इस समय काव्य -कला का अभूतपूर्व उत्कर्ष दिखायी देता है। इस तथ्य को ध्यान में रखकर ही रमाशंकर शुक्ल 'रसाल' ने इस काल को 'कलाकाल' नाम दिया था।

यहाँ ध्यान रखना होगा कि कला के प्रति ऐसा आग्रह सिर्फ रीतिबद्ध और रीतिसिद्ध कवियों में है, रीतिमुक्त कवि इससे काफी हद तक मुक्त हैं। निस्संदेह उनके यहाँ भाव की ही विशेष महत्ता है। कला के प्रति रीतिकालीन कवियों के विशेष लगाव को ठीक से समझने के लिए जरूरी है कि तत्कालीन परिवेश का पर गौर किया जाय।

3. रीतिकालीन परिवेश और काव्यकला

जैसा कि हम जानते हैं, रीतिकाल सामन्ती व्यवस्था के सुदृढ़ होने का काल है। इस काल के अधिकांश कवि किसी राजा या सामंत के दरबार में रहकर रचना करते थे। स्वाभाविक रूप से इन कवियों को कविता करते समय अपने आश्रयदाताओं की रुचि का ध्यान रखना पड़ता था। कवियों की कोशिश होती थी कि रचना आश्रयदाताओं एवं रसिकों को चमत्कृत करने वाली हो। इसके लिए कवियों ने कला पर सबसे ज्यादा भरोसा करना शुरू कर दिया। कविता कला की दृष्टि से जितनी सुसज्जित होती उतनी ही उसे काव्यरसिकों से वाहवाही मिलती। कवियों को रचना के एवज में यश और धन की प्राप्ति होती। इसमें संदेह नहीं कि कवियों को कला के प्रति सचेत बनाने में तत्कालीन परिवेश ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

बिहारी स्वयं दरबार से जुड़े कवि थे। कहा जाता है कि उनके आश्रयदाता मिर्ज़ा राजा जय सिंह उनकी काव्यकला के बहुत बड़े प्रशंसक थे। वे बिहारी के दोहों के इतने बड़े प्रशंसक थे कि उनके प्रत्येक दोहे पर एक अशर्फी पुरस्कारस्वरूप दिया करते थे। दोहा जैसा छंद लिखकर यदि कोई कवि इतना सम्मान हासिल कर सका तो स्वीकार करना होगा कि उसके दोहे कला की दृष्टि से उत्कृष्ट रहे होंगे। हिंदी में अनेक कवियों ने इस छंद का प्रयोग किया है, लेकिन शायद ही किसी को वह ऊँचाई हासिल हुई है जो बिहारी को मिली है। बिहारी के दोहे उनकी कलात्मक क्षमता का अद्भुत नमूना प्रस्तुत करते हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के शब्दों में कहें तो ये दोहे 'रस के छोटे- छोटे छींटे हैं'। (हिंदी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ, 137) कम शब्दों में अधिक बातें कहना एक कला है और यही कला बिहारी के

दोहों को विशिष्ट बनाती है। उन्होंने इस छोटे-से छंद में जितना अर्थ भरा है, वह सामान्य पाठक के लिए आश्चर्यजनक है। ठीक ही आलोचकों ने बिहारी के दोहों में 'गागर में सागर' की कल्पना की है। 'दोहा' की विशेषता है कि वह सभा- समाज के जितना अनुकूल होता है, उतना ही रचनाकार को पांडित्य- प्रदर्शन का अवकाश भी देता है। शायद इसी सुविधा का ध्यान में रखकर बिहारी ने यह छंद अपनाया होगा।

4. बिहारी की कला दृष्टि

बिहारी रीतिसिद्ध काव्यधारा के प्रतिनिधि कवि हैं। इस काव्यधारा से जुड़े कवियों ने यद्यपि लक्षण ग्रन्थ नहीं लिखे, फिर भी रचना करते समय इन कवियों का ध्यान बराबर लक्षणों पर बना रहा। काव्य के सैद्धांतिक पक्ष का विवेचन न करते हुए भी ये रचनाकार काव्यशास्त्रीय नियमों की परिधि में रचना करते थे। इस दृष्टि से कहा जा सकता है कि इन कवियों की कला दृष्टि के निर्माण में शास्त्र की निर्णायक भूमिका है। रस, छंद, अलंकार, नायिकाभेद, नखशिख, षटऋतु के शास्त्रीय प्रभाव में बिहारी एवं दूसरे रीतिसिद्ध कवियों ने रचनाएं लिखी हैं, यह स्वीकृत तथ्य है। संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश की मुक्तक काव्य- परम्परा से बिहारी प्रभावित थे, इसका प्रमाण उनकी 'सतसई' है। 'आर्यासप्तशती', गाहासप्तशती' और 'अमरूशतक' के 'सतसई' पर पड़ने वाले प्रभाव की चर्चा पद्मसिंह शर्मा जैसे आलोचक ने भी की है।

यहाँ उल्लेखनीय है कि रीतिसिद्ध कवि मूलतः कवि थे, आचार्य नहीं। वे रीतिबद्ध कवियों की तुलना में अधिक स्वतंत्र थे और रचना- प्रक्रिया में शास्त्र के अलावा अपने लोकज्ञान और पर्यवेक्षण का भी कभी- कभार उपयोग कर लिया करते थे। ये कवि रीतिमुक्त कवियों की तरह शास्त्रीय नियमों की अवहेलना नहीं कर सके, बावजूद इसके उनमें कहीं-कहीं स्वतंत्र उद्भावना शक्ति की झलक अवश्य दिख जाती है। बिहारी के यहाँ कई ऐसे दोहे मिल जायेंगे जिनकी रचना उन्होंने लोकज्ञान और सूक्ष्म पर्यवेक्षण के आधार पर की है। 'घरजमाई' की स्थिति या वैद्यों, पंडितों के पाखंड पर जैसी चुटकी उन्होंने ली है, वह उनकी गहरी पर्यवेक्षण शक्ति का परिचायक है। इसलिए बिहारी की काव्यकला के निर्माण में उनके लोक- ज्ञान की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। अपने दोहों में उन्होंने कई ऐसे शब्दों और सूक्तियों का प्रयोग किया है जिनका सीधा सम्बन्ध लोक से है। सारांश रूप में कह सकते हैं कि बिहारी की कला दृष्टि के निर्माण में शास्त्र एवं लोक -ज्ञान के अलावा कवि कल्पना- शक्ति की भी भूमिका रही है।

5. बिहारी की काव्यकला

अधिकांश आलोचकों की नजर में बिहारी रीतिकाल के श्रेष्ठ कवि हैं। उनकी श्रेष्ठता का आधार उनकी एकमात्र रचना 'सतसई' है। 'सतसई' मुक्तक काव्य है, जिसमें लगभग सात सौ दोहे संकलित हैं। कोई कवि कम लिखकर भी पाठकों और आलोचकों की नजर में उस दौर का श्रेष्ठ कवि हो सकता है, 'सतसई' इसका प्रमाण है। इस ग्रन्थ की लोकप्रियता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि 'रामचरित मानस' के बाद हिंदी में सर्वाधिक टीकाएँ इसी ग्रन्थ की लिखी गयीं हैं। गद्य और पद्य दोनों में लगभग पचास महत्वपूर्ण टीकाएँ इस ग्रन्थ की लिखी जा चुकी हैं। टीकाकारों ने 'सतसई' के एक दोहे की अनेक व्याख्याएँ की हैं। लाला भगवानदीन ने इसकी 'शांतरसपरक' व्याख्या की है। इसी प्रकार दूसरे आलोचकों ने भी इसकी अलग- अलग दृष्टि से व्याख्या की है। बिहारी के इस ग्रन्थ ने बाद के कवियों को इतना प्रभावित किया कि कई कवि इसकी नक़ल पर 'सतसई' लिखने लगे। कुछ ने तो 'हजारा' तक लिखा। इससे पता चलता है कि हिंदी साहित्य के इतिहास में 'बिहारी सतसई' का क्या महत्व है। जार्ज ग्रियर्सन ने यहाँ तक स्वीकार किया कि पूरे योरोपीय साहित्य में इस तरह का कोई दूसरा ग्रन्थ नहीं है। जाहिर है, यह बिहारी की काव्यकला ही है जिसकी वजह से 'सतसई' को यह प्रतिष्ठा हासिल हुई।

ताज्जुब की बात तो यह है कि बिहारी को यह प्रतिष्ठा मुक्तक काव्य- रचना के लिए मिली, जिसमें रचनाकार के पास भाव-व्यंजना के लिए उतना अधिक अवकाश नहीं रहता, जितना प्रबंध काव्य में। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने प्रबंधकाव्य से मुक्तक की तुलना करते हुए लिखा है : "मुक्तक में प्रबंध के समान रस की धारा नहीं रहती जिसमें कथा प्रसंग की परिस्थिति में अपने को भूला हुआ पाठक मग्न हो जाता है और हृदय में एक स्थायी प्रभाव ग्रहण करता है। इसमें तो रस के ऐसे छींटे पड़ते हैं जिनसे हृदयकलिका थोड़ी देर के लिए खिल उठती है। यदि प्रबंधकाव्य विस्तृत वनस्थली है तो मुक्तक एक चुना हुआ गुलदस्ता है।" (हिंदी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ, 136) मुक्तक में प्रत्येक छंद स्वतंत्र प्रसंग लिए हुए होता है, उसका पूर्व के प्रसंग से सम्बद्ध होना अनिवार्य नहीं होता। इसमें कवि को प्रसंग कल्पित करते हुए उसे संक्षिप्त रूप और सशक्त भाषा में प्रस्तुत करना होता है, जो कवि के लिए चुनौती जैसा है। सफल मुक्तककार वही हो सकता है जिसमें कल्पना और भाषा की समाहार- शक्ति हो। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों में ' जिस कवि में कल्पना की समाहारशक्ति के साथ भाषा की समाहारशक्ति जितनी अधिक होगी उतनी वह मुक्तक की रचना में सफल होगा।' (वही, पृष्ठ, 136- 137) कहने की आवश्यकता नहीं कि यह क्षमता बिहारी में पूर्ण रूप से मौजूद है और तभी वे मुक्तक रचना में पूर्ण रूप से सफल भी हैं। बिहारी की इस क्षमता को देखते हुए ही उनके सम्बन्ध में यह दोहा प्रचलित हो गया-

"सतसैया के दोहरा, ज्यों नावक के तीर।
देखत को छोटे लगैं, घाव करैं गंभीर।| (बिहारी की वाग्विभूति, पृष्ठ, 77)

आशय यह है कि 'बिहारी सतसई' के दोहे छोटे होने के बावजूद पाठक के हृदय पर गंभीर प्रभाव छोड़ते हैं। इसका कारण यह है कि बिहारी ने सतसई में काव्यकला का बड़ा ही सधा प्रयोग किया है। ऐसा सधा प्रयोग कि मुक्तक काव्य- परंपरा का सम्पूर्ण उत्कर्ष इस ग्रन्थ में दिखाई देने लगता है। 'सतसई' में भाव- योजना, हाव- योजना, वस्तु- योजना, अलंकार योजना और भाषा का जैसा संतुलित प्रयोग हुआ है वह बहुत कम रचनाओं में दिखाई देता है। दोष- दर्शन करने वाले बिहारी में भी दोष ढूंढ लेते हैं , किन्तु यह स्वीकार करना होगा कि उनकी शक्ति के सामने बड़े- बड़े आलोचक भी सिर झुकाते नजर आते हैं।

भाव-योजना - बिहारी मूलतः श्रृंगारी कवि हैं। श्रृंगार के दोनों पक्षों पर उन्होंने दोहे लिखे हैं, लेकिन मन उनका संयोग पक्ष में ही ज्यादा रमा है। इसके कारणों की ओर संकेत करते हुए डॉ. बच्चन सिंह ने लिखा है : " संयोग श्रृंगार का मूलाधार शारीरिक आकर्षण है, जो अनेक प्रकार के रूपों, भंगिमाओं, चेष्टाओं, वाचिक एवं शारीरिक विकारों, मानसिक दशाओं आदि में प्रस्तुत होता है।" (बिहारी का नया मूल्यांकन, पृष्ठ, 38) कहने की आवश्यकता नहीं कि इन प्रसंगों में कवि को अपनी प्रतिभा दिखाने का पर्याप्त अवसर मिलता है। जहाँ तक बिहारी का प्रश्न है, यह मानना होगा कि उनका मन क्रीड़ापरक प्रेम की अभिव्यक्ति में ज्यादा रमा है। कवि ने प्रेम के क्रीड़ापरक प्रसंगों की योजना बड़ी निपुड़ता और कौशल से की है। इसकी वजह से उनकी भाव -योजना रसव्यंजना दृष्टि से पूरी तरह सफल है।

हाव-योजना - भाव-व्यंजना में भंगिमाओं की अहम भूमिका मानी जाती है। सचेष्ट भंगिमा को हाव कहा जाता है। हाव को परिभाषित करते हुए बच्चन सिंह ने लिखा हैं: " एक विशेष प्रकार की भंगिमा जो संभोगेच्छा सूचक होती है काव्यशास्त्र में हाव कही जाती है।" (वही, पृष्ठ, 39) कहा जाता है कि बिहारी की रसव्यंजना का पूर्ण वैभव उनकी हाव- योजना में दिखाई देता है। बिहारी जैसी सुन्दर अनुभाव या हाव- योजना किसी श्रृंगारी कवि के यहाँ नहीं दिखाई देती। बिहारी का सर्वाधिक सबल पक्ष उनकी हाव-योजना में उभरा है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित दोहा देखें :

बतरस लालच लाल की मुरली धरी लुकाइ।
सौंह करैं भौंहनु हँसै, दैन कहै नटि जाइ।| (बिहारी रत्नाकर, पृष्ठ, 216)

यह दोहा हाव- योजना का उत्कृष्ट नमूना प्रस्तुत करता है। इस सन्दर्भ में एक और उदाहरण देखा जा सकता है :

नाँक चढै सीबी करै जितै छबीली छैल।
फिरि फिरि भूलि वहै गहै प्यौ कँकरीली गैल।| (वही, पृष्ठ, 280)

नायिका का सीबी करना नायक को इतना अच्छा लगता है कि वह बार- बार इसे नायिका के मुँह से सुनना चाहता है और इसके लिए कंकड़ीले मार्ग का जानबूझकर चयन करता है। यहाँ सीबी का व्यापार निश्चेष्ट हाव- योजना का उदाहरण प्रस्तुत करता है।

वस्तु-योजना - भावों की सटीक अभिव्यक्ति के लिए बिहारी ने वस्तु- व्यंजना का भी सहारा लिया है। उनकी वस्तु - योजना प्रभावशाली दृश्य उपस्थित करने में पूरी तरह समर्थ है। इसका इस्तेमाल कवि ने नायिका की कांति, सुकुमारता, विरहताप आदि के सन्दर्भों में किया है। इस प्रक्रिया में उसने जो क्रम- स्थापन किया है वह भी बड़ा प्रभावोत्पादक है। उदाहरण के लिए यह दोहा देखा जा सकता है :

सघन कुंज, घन घन तिमिरु, अधिक अँधेरी राति।
तऊ न दुरिहै, स्याम यह, दीप शिखा जाति।| (वही, पृष्ठ, 141)

पहली पंक्ति में जो तीन वस्तुओं - कुंज, तिमिर और अँधेरी रात का क्रम दिया गया है, वह रात्रि की भयंकर कालिमा को पूरी व्यंजित कर देता है।

कहीं- कहीं वस्तु- योजना में अतिरंजना भी दिखती है। एक उदाहरण देखिये:

आड़े दै आले बसन जाड़े हूँ की राति।
साहसु ककै सनेह- बस सखी सबै ढिग जाति।। (वही, पृष्ठ, 134)

प्रोषितपतिका नायिका के विरह ताप को अभिव्यक्त करने के लिए कवि ने यहाँ अतिरंजना का ही सहारा लिया है।

अलंकार-योजना - बिहारी का अलंकारों पर असाधारण अधिकार है। उनकी 'सतसई' में प्रायः सभी प्रमुख अलंकार मिलते हैं। बिहारी ने शब्दालंकार, अर्थालंकार और उभयालंकार सभी की योजना बड़ी सावधानी से की है। किसी- किसी दोहे में कई अलंकार आ गए हैं, लेकिन उनमें कोई उलझाव नहीं आया है। बिहारी के अलंकार- प्रेम का नमूना 'सतसई' का पहला दोहा प्रस्तुत कर देता है, जिसमें वे श्लेष का चमत्कार दिखाते हैं। 'असंगति' या 'विरोधाभास' अलंकार के कई मार्मिक दोहे उन्होंने लिखे हैं। एक उदाहरण देखिये:

दृग उरझत , टूटत कुटुम जुड़त चतुर- चित प्रीति।
परति गाँठ दुर्जन हियै; दई, नई यह रीति।| (वही, पृष्ठ, 169)

सूक्तियाँ - बिहारी ने अपने काव्य में बहुत-सी सूक्तियों का प्रयोग किया है। इनमें से अधिकतर सूक्तियाँ नीतिपरक हैं। इन सूक्तियों में वर्णनवैचित्र्य या शब्दवैचित्र्य की प्रधानता है।

भाषा- शैली

बिहारी कला के प्रति अत्यधिक सचेत कवि हैं। इसके कारण उनके दोहों में टेकनीक सम्बन्धी त्रुटि नहीं दिखाई देती। बिहारी का भाषा पर अच्छा अधिकार है। उनकी वाक्यरचना व्यवस्थित है और उसमें शब्दों का प्रयोग बहुत सावधानी से किया गया है। बिहारी के यहाँ जो वाग्वैदग्ध्य है, या उनके कथन में जो बाँकपन दिखता है वह उनकी भाषिक क्षमता की ही देन है। यदि किसी कवि को रचना में शब्द जड़ने की कला नहीं आती तो उसमें वाग्वैदग्ध्य भी नहीं मिलेगा। बिहारी की काव्यभाषा में मूलतः ब्रजभाषा के शब्द आये हैं, पर जगह- जगह पर उन्होंने जरूरत के मुताबिक बुन्देली और अरबी- फारसी शब्दों का प्रयोग भी किया है। व्याकरण की कसौटी पर उनके कुछ भाषिक प्रयोग त्रुटिपूर्ण हो सकते हैं, लेकिन समग्रता में उन्होंने भाषा का प्रयोग बड़ी सावधानी से किया है।

6. निष्कर्ष

बिहारी की गणना रीतिकाल के श्रेष्ठ कवियों में होती है। उनकी प्रसिद्धि का आधार उनकी एकमात्र रचना 'सतसई' है। 'सतसई' मुक्तक काव्य है जिसमें लगभग सात सौ दोहे संकलित हैं। इतना कम लिखकर और वह भी दोहा जैसा छोटा छंद लिखकर कोई कवि इतनी कीर्ति प्राप्त कर सकता है, बिहारी इसके उदाहरण हैं। 'सतसई' आलोचकों एवं पाठकों के बीच इतनी लोकप्रिय रही है कि इसकी गद्य और पद्य में पचासों टीकाएँ लिखी गयी हैं। एक- एक दोहे की अनेक तरह से व्याख्या की गयी है। जाहिर है, काव्यकला की दृष्टि से यह उत्कृष्ट ग्रन्थ है तभी व्याख्याकारों की इसमें इतनी दिलचस्पी रही है। कल्पना और भाषा की समाहारशक्ति जिस कवि में जितनी अधिक होगी वह उतना ही अधिक सफल मुक्तककार होगा। इस दृष्टि से बिहारी एक सफल मुक्तककार हैं। बिहारी ने लक्षणग्रन्थ नहीं लिखा है, लेकिन सतसई की रचना पर लक्षणग्रंथों का प्रभाव देखा जा सकता है। उनकी कला-दृष्टि के निर्माण में शास्त्र-ज्ञान के अलावा लोक- ज्ञान और कवि की पर्यवेक्षण- शक्ति की भी भूमिका है। 'सतसई' की भाव-योजना या रस- योजना, हाव- योजना, वस्तु- योजना और अलंकार- योजना उत्कृष्ट है। कवि ने बड़ी निपुड़ता और कलात्मक कौशल के साथ दोहों में इनका संयोजन किया है। काव्यभाषा पर बिहारी की असाधारण पकड़ है। यह पकड़ उनके वाग्वैदग्ध्य में देखी जा सकती है। ब्रजभाषा के अलावा, बुन्देली और अरबी- फ़ारसी के शब्दों का प्रयोग उन्होंने आवश्यकतानुसार किया है। भाषा के प्रति यह उनका खुलापन कहा जा सकता है। निष्कर्षतः माना जा सकता है कि बिहारी कला के प्रति सचेत कवि हैं।